भारतीय लोक कला में प्रयुक्त मांगलिक प्रतीक एवं उनका महत्व

डॉ0 रीना सिंह*

सारांश

लोककला भारत की सांस्कृतिक धरोहर है जो हमारी लोक संस्कृति को चित्रांकित करती है। लोक जीवन की कथाएँ, लोकगीत, बोलियां, लोक साहित्य आदि लोक कला से सम्बन्धित होते हैं। भारत के प्रत्येक क्षेत्र में लोककला विद्यमान है जिनमें विभिन्न ऋतुओं, महीनों के त्यौहार, व्रत, मांगलिक कार्यो को उत्साह पूर्वक मनाया जाता है। धार्मिक एवं सामाजिक उत्सवों के विभिन्न अवसरों पर जो चित्र बनाये जाते है उनके अपने विशेष प्रयोजन एवं विधियाँ होती है। ये मांगलिक प्रतीक के रूप में पूज्य है इन प्रतीकों के माध्यम से लोककला, संस्कृति, परम्पराएं प्रतिबिम्बित होती है।

शब्द संकेत : लोकमानस, परम्परा, प्रतीक, अनुष्ठान, कल्याण

प्रस्तावना

प्राचीन काल से ही मनुष्य ने अपनी भावनाओं को अभिव्यक्त करने के लिए कला का सहारा लिया और समय के साथ–साथ इन कला रूपों में विविधता आई। लोक कला सदैव लोक मानस की भावनाओं की सहज अभिव्यक्ति रही है और अपने परम्परागत विश्वासों, आस्थाओं, धारणाओं, रहस्यात्मक एवं अतीत की प्रेरणा पर आधारित है। यह एक निश्चित भौगोलिक सीमा में रहते हुए वहीं के भौगोलिक उपादानों, सांस्कृतिक मूल्यों, धार्मिक विश्वासों, पौराणिक कथाओं, सामाजिक एवं पारम्परिक प्रतीकों के आधार पर विविध माध्यमों से निरूपण की जाती रही है। लोक कला में महत्वपूर्ण तत्व है सामुदायिक चेतना व लोक भावना। लोक कला व्यक्ति विशेष की न होकर पूरे समुदाय की होती है। यह निरन्तर गतिमान रहते हुए बिना किसी प्रलोभन के निरन्तर आगे बढ़ती रही है पीढ़ी दर पीढ़ी परम्पराओं मान्यताओं और रीति– रिवाजों को हस्तान्तरण करती रही है।

लोक तत्व के सैद्धान्तिक एवं व्यवहारिक दो रूप होते है। सैद्धान्तिक रूप में लोकदर्शन, लोकधर्म और लोक मूल्य का समन्वय होता है। लोकदर्शन में सभी दर्शन, लोकधर्म और सभी धर्म तथा लोकमूल्य में सभी लोकोप्रयोगी मूल्य व्याप्त होते है अर्थात सभी विशिष्ट दर्शन मूल्य तथा धर्म से लोकोप्रयोगी तत्वों का चयन कर उन्हें उतने ही रूप ग्रहण करता है जो समस्त लोक के लिए लाभप्रद हो इसलिए इस लोक तत्व में विविधता होते हुए भी एकता दृष्टिगत होती है और यही लोकतत्व जब विभिन्न लोक के माध्यम से प्रकट होते है तो सभी जाति, धर्म, समुदाय और वर्ग सरस हो जाते है[1]।

प्रतीक भारतीय कला में विविध माध्यमों से रूपायित हुए है। प्राचीन काल से ही कला प्रतीकों का प्रयोग मिलता है प्रत्येक धार्मिक अथवा सामाजिक अनुष्ठानों में कतिपय प्रतीक को विशिष्ट माना गया है। भारतीय कला–प्रतीकों को कई कोटियों में गिनाया जा सकता है जैसे मांगलिक प्रतीक, धार्मिक प्रतीक, दैवत्व एवं राजत्त्व के प्रतीक आदि। ये प्रतीक पुष्प–लता, वृक्ष, पशु–पक्षी, सरीसृप, उपकरण, पात्र, शस्त्र अथवा डिजाइन के माध्यम से रूपायित किए गए हैं जैसे पद्म, माला (पुष्प), बोधिवृक्ष, कल्पलता, कल्पवृक्ष, श्रीवृक्ष (लता–वृक्ष), हस्ति, अश्व, सिंह (पशु), गरूड़ (पक्षी), नाग (सरीसृप), मीन–मिथुन (जलचर), आसन, छत्र, चामर, दण्ड, पादपीठ, दर्पण, शंख, चक्र (उपकरण), कलश (पात्र), अंकुश, खड्ग, वज्र (शस्त्र) और स्वस्तिक, श्रीवत्स, त्रिरत्न, पंचाडगुल (डिजाइन) आदि[2]। भारतीय ग्राम्य जीवन में सर्वाधिक कल्याण एवं मांगलिक प्रतीकों स्वस्तिक, सूर्य, कमल, कलश आदि अधिक लोकप्रिय है। इन चार मुख्य प्रतीकों के अतिरिक्त क्षेत्रीय प्रभाव में विविध प्रतीकों का अंकन किया जाता है। परन्तु स्वस्तिक, सूर्य, कमल, कलश उत्तरीय भारत से लेकर दक्षिणी भारतीय समाज में विविध माध्यमों द्वारा इन मांगलिक प्रतीकों का सृजन किया जाता रहा है।

धर्म मनुष्य का आदिम और प्राथमिक अनुभव है। धर्म ने लोक कला एवं सभी अन्य कलाओं को उन्नत वैभव प्रदान किया। मूलतः धर्म की प्रेरणा अनन्त और निराकार की खोज है। प्रतिमा और प्रतीक इसी दृष्टि की उपज है। प्रतिमा रूप देने के प्रयास से मूर्तियाँ–मन्दिर विश्वभर में बने और प्रतीक के रूप में चित्रकला उभर कर आयी। रूप संकल्प कला शक्ति–स्त्रोत है[3]।

स्वस्तिकः सब मांगलिक प्रतीकों में श्रेष्ठ चिन्ह स्वस्तिक है। यह सूर्य का प्रतीक था क्योंकि सूर्य जीवन के सब मंगलों का स्त्रोत है जीवन के स्वस्ति–भाव (कल्याण रूप) का प्रतीक ही स्वस्तिक है। द्यावापृथिवी के मण्डल के चतुर्भूजी आधार का प्रतीक स्वस्तिक है। सूर्योदय और सूर्यास्त के साथ सम्बन्धित चार दिशाओं का मूर्त रूप स्वस्तिक में देखा जा सकता है। इसे ही दिक स्वस्तिक की चार भुजाओं को यदि दिक चक्रवाल से घेर दे तो वही सुदर्शनचक्र बन जाता है[4]।

* सह0 प्राध्यापक, चित्रकला विभाग, डी0एस0 बी0 परिसर, नैनीताल

स्वस्तिक मांगलिकता का प्रतीक है। स्वस्तिक की व्यापक महत्वता सम्पूर्ण भारतीय दर्शन में स्थापित है। भारतीय लोक संस्कृति में स्वस्तिक को शुभ, समृद्धि, कल्याण, शांति, उन्नति एवं विकास का प्रतीक माना गया है। स्वस्तिक का अर्थ स्वति कारक अर्थात मंगल करने वाला। यह मांगल्य प्रतीक प्रत्येक शुभ संस्कार, व्रत, अनुष्ठान में सर्वाधिक प्रयुक्त होने वाला प्रतीक है। स्वस्तिक एक आड़ी और खड़ी रेखा के काटने से बनता है। जिस जगह आड़ी रेखा खड़ी रेखा को काटती है वह मूल बिन्दु है। आड़ी, खड़ी रेखाएँ स्त्री–पुरूष का प्रतीक है। जिनके मिलने से सृष्टि का निर्माण होता है। चार रेखाएँ दिशाओं के लोकपाल अग्नि, इन्द्र, वरूण और सोम का प्रतीक है। चार रेखाएँ चार वर्णों धर्म, अर्थ, पृथ्वी, आकाश, पाताल, और स्वर्ग लोक का भी प्रतीक है।

जैन धर्म में भी हमें स्वस्तिक का अंकन प्राप्त होता है। तीर्थकर की मूर्तियों से पहले वहाँ तीर्थकर की पूजा प्रस्तर के चौकोर शिलापटों पर की जाती थी जिन्हें आयागट्ट (संस्कृत आर्यकपट) कहा गया है[5]। ये आयागपट्ट उस समय के पूजा के स्वरूप को दर्शाते है। प्रतीक पूजा के साथ ही मूर्ति पूजा का आरम्भ भी हो चुका था इसका उत्कृष्ट उदाहरण है मथुरा से प्राप्त आयाग पट। इस आयागपट्ट में महास्वस्तिक का चिन्ह बना है अतएव जिसे स्वस्तिक पट या सोत्थिय पट की संज्ञा दी जा सकती है। इसके बीच में छत्र के नीचे पद्मासन में तीर्थकर मूर्ति है उसके चारों और स्वस्तिक की चार भुजाऐ है। तीर्थकर के मण्डल की चार दिशाओं में चार त्रिरत्न दिखाए गए है। महास्वस्तिक की लहराती चार भुजाओं के मोड़ों में भी चार धार्मिक चिन्ह है जैसे मीन, मिथुन, वैजयन्ती, स्वस्तिक एवं श्रीवत्स[6]।

भारतीय लोक कला में सर्वाधिक महत्व स्वस्तिक का है। स्वस्तिक गणपति का प्रतीक भी माना गया है विवाह आदि में मांगलिक कार्यो में जहाँ स्वस्तिक बनाया जाता है। इसका प्रयोग भित्ति चित्रण, भूमि चित्रण, काष्ठ विभिन्न प्रकार के पात्रों, गोदना आदि सभी में चित्रित किया जाता है। ग्रामीण समाज की सांस्कृतिक रचना में स्वस्तिक को विविध प्रकारों के अलंकरणों, उत्सवों में आवश्यकतानुसार गोबर, गेरू, आटे, पिसा हुआ चावल, हल्दी कुमकुम, चंदन, फूलों के रंगो आदि से अनुष्ठान के अनुरूप अंकित किया जाता है।

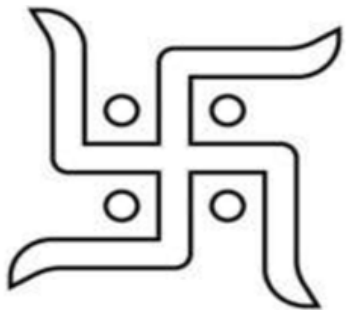

सूर्य एवं चन्द्रः भारतीय संस्कृति में सूर्य संरक्षक, ऐश्वर्य–संपन्न, प्रेरक, वरेण्य, सौभाग्य धारक सभी को संपत्ति प्रदान करने वाले है। पंच महाभूत को प्राणतत्व प्रदान करने वाले देव भी सूर्य है। भारतीय ज्ञान, परम्परा का अपरिहार्य तत्व है। नदी स्नान सूर्य को जल दिए बिना अपूर्ण समझा जाता है। वस्तुतः सूर्य समस्त जीवधारियों, वनस्पतियों, नदियों, पर्वतों, अरण्यों, नगरों, नक्षत्रों, गृहों, जलाशयों, गिरि–गहरों की प्राकृतिक स्थिति और भविष्य का नियामक है इसलिए भारतीय चितंन धारा ने अपने आराध्यों में सूर्य को श्रेष्ठ स्थान पर अधिष्ठत किया है।

लोक कला में प्राचीन काल से ही सूर्य और चन्द्र प्रतीक के रूप में चित्रित हुए। भारतीय समाज में सभी त्यौहार, व्रत, उपासना आदि सूर्य और चन्द्र की गतियों के आधार पर संचालित होते रहे है। सूर्य तेजस्विता, गतिशीलता, जीवंतता, आरोग्यता का प्रतीक है। परम्परा चली आ रही है कि सूर्य के कारण ही धरती पर वृक्ष, फल, फूल विविध वनस्पति उत्पन्न हुई। अतः मानव जीवन का मूल आधार सूर्य है। यह लोक संस्कृति के ऐसे लोकमान्य अंकन है कि इन्हे सर्वत्र मांगलिक उत्सवों में सर्वप्रथम चित्रांकन किया जाता है।

सूर्य का कला में चित्रण सम्भवतः पाषाण युग से ही प्रारम्भ हो गया था। प्रागैतिहासिक कालीन स्थल बुर्जहोम से प्राप्त एक पत्थर की पटिया पर इसका अंकन मिलता है। इन चित्रों में शिकार का दृश्य सूर्य को दो रूपों में प्रकट करता है। प्रथम किरण बिखेरता हुआ पूर्ण चक्र तथा दूसरा सात किरणों से युक्त उगता हुआ सूर्य। सिंगनपुर शिलाश्रय (रायगढ़) से प्राप्त चित्र में सूर्य का अंकन किया गया है। इस चित्र में उगते हुए सूर्य अर्धवृत्ताकार रूप में दिखाया गया है जिसमें से 6 किरणें बिखर रही हैं[7]। धर्म में सूर्य का जो स्थान प्राचीन समय में था वही स्थान आज भी है और लोक कला में भी परम्परा के अनुसार सूर्य को सृष्टी के पालनहार के रूप में पूजते हैं।

सूर्य उपासना का अनुपम लोक पर्व मुख्य रूप से बिहार और झारखंण्ड में मनाया जाने वाला छठ पूजा है। कार्तिक शुक्ल पक्ष में षष्ठी को छठ पूजा (षष्टी पूजा) मनाया जाता है यह त्यौहार मैथिल, मगही और भोजपुरी समुदाय का विशिष्ट पर्व है। इस त्यौहार में सूर्य के प्रति कृतज्ञता, आभार व्यक्त किया जाता है। महिलायें कठोर, निर्जला व्रत रख कर सूर्य उपासना करती है और घर परिवार की सुख समृद्धि एवं परिजनों के स्वास्थ्य की मंगल कामना करती है।

सूर्य के समान भारतीय समाज में चन्द्र भी पूजनीय है। चन्द्र पावनता, शीतलता व कल्पना शक्ति का प्रतीक है। सुन्दर मुख की तुलना चन्द्रमा से की जाती है अतः यह सौन्दर्य का भी प्रतीक है। करवाचौथ, शरद पूर्णिमा व कार्तिक आदि में चन्द्र देवता की पूजा की जाती है। चन्द्र अमृतत्व का भी प्रतीक है इसलिए शरद पूर्णिमा की चाँदनी में खीर या दूध खुले स्थान में रखते है क्योंकि रात्रि में सर्वाधिक अमृत बरसता है। भारतीय ही नहीं मुस्लिम समाज में चन्द्र का विशेष महत्व है। दूज के चाँद को सर्वाधिक पवित्र मानते है और उनके झण्डे, लोकचित्रों, धार्मिक चित्रों में भी चाँद और तारें अंकित किये जाते है। इस प्रकार भारतीय लोक समाज में सूर्य और चन्द्र दोनों ही समान रूप से पूजनीय है।

कमलः प्राचीन काल से पुष्प, पद्म या कमल का विशिष्ट महत्व रहा है। भारतीय संस्कृति में कमल को शुभ प्रतीक माना गया है। यह सुंदरता उर्वरता और समृद्धि का प्रतीक है। विविध त्यौहारों, उत्सवों एवं मांगलिक कार्यो में कमल का चित्रण शुभ माना गया है। पद्म या कमल पद्मलक्ष्मी का आसन एवं लीला पुष्प है। बिना पद्म के लक्ष्मी की परिकल्पना तक सम्भव नही है इसलिए पद्मनी, पद्मवर्णा, पद्महस्त, पद्मप्रिया, पद्माष्ठिता, पद्मानता, पद्माक्षी, पद्मसंभवा, कमलाना आदि नामों से उन्हें अभिहित किया गया है। लक्ष्मी और कमल का घनिष्ट सम्बन्ध है। लक्ष्मी वैभव एवं संपदा की प्रतीक है जबकि पद्म अनासक्ति का प्रतीक है[8]।

भारतीय लोक कला में कमल का अंकन भूमि और भित्ति दोनों में ही किया जाता है। ग्रामीण अंचल में कच्चे घर, आंगन को गोबर या चिकनी मिट्टी से लीप कर मांगलिक अवसर पर आलेखन सृजित करते है जैसे उत्तर प्रदेश और बिहार में सत्यनारायण की पूजा के अवसर पर अष्टदल कमल के आठ खानों को पुष्प का रूप देकर मध्य में भगवान के पैरों का छाप बनाते है। वर्तमान में घर और आंगन पक्के बन गये है परन्तु महिलाएं शुभ अवसर पर आटे से मांगलिक प्रतीकों को सृजित करना नहीं भूलती है। दीपावली के शुभ अवसर पर अष्टदल कमल को रेखांकित कर मध्य में श्री यंत्र बनाये जाते है। वर्ष भर मनाये जाने वाले उत्सवों, धार्मिक अनुष्ठानों में विभिन्न प्रकार के प्रतीक बनाये जाते है जिनमें कमल एक विशिष्ट प्रतीक है जो शक्ति और प्रकृति के विविध रूपों को व्यक्त करती है।

भारतीय लोक मानस में कमल या पद्म का विशिष्ट स्थान है कमल कीचड़ में उत्पन्न हो कर भी सर्वत्र क्रांति बिखेरता है और जल में रह कर भी वह जल से पृथक है। सूर्य उदय के साथ ही कमल पुष्पित और पल्लवित होता है वहीं सूर्यास्त के समय पंखुड़ियाँ सिमट (बन्द) जाती हैं। कमल पवित्रता और अमरतत्व का प्रतीक है। कुमाऊँ अंचल में विष्णु अष्टदल कमल का चित्रांकन धरातल, चौकी अथवा कागज पर किया जाता है। इसके उपरान्त इस पर विष्णु प्रतिमा को स्थापित कर विष्णु पूजन किया जाता है। इसके केन्द्र में बिन्दु सृष्टि का द्योतक है। अष्टदल कमल का निमार्ण किया जाता है जिसके बाहर 16 दल उसके उपरान्त 24 दल और अन्त में 32 दल का निर्माण किया जाता है। सबसे बाहरी घेरे में पुनः अष्टदल का निमार्ण किया गया है।

कलशः भारतीय संस्कृति का सम्माननीय एवं पूर्णता का प्रतीक है कलश। प्राचीन काल से ही लोक जीवन और लोक कला में इसकी मंगलमय उपस्थिति रही है। कलश को घट, पूर्णघट, कुम्भ, पूर्णकुम्भ, स्वर्णपात्र आदि कहा गया है इसकी उत्पत्ति भी समुद्र मंथन के समय लक्ष्मी के साथ हुई थी। घट के अन्दर अमृत था। कलश एक शुभ वस्तु का प्रतीकात्मक अभिप्राय है। फूल–पत्तियों से युक्त पूर्ण घट सुख–सम्पत्ति और जीवन की पूर्णता का द्योतक है। भारतीय दर्शन में घड़े को जीवन तथा शरीर माना गया और उसमें भरा हुआ रस जीवन रस या प्राण है इसलिए मानव को पूर्ण घट माना गया है और इसी प्रकार विराट विश्व को भी पूर्ण कुम्भ। ऋग्वेद में जिस पूर्ण कलश का उल्लेख है वह सोम से भरा पात्र है। सोम जीवन का अमर और मीठा रस है। ऋग्वेद और अथर्ववेद में पूर्ण कुम्भ या पूर्ण कलश का उल्लेख प्रमुखता से प्राप्त होता है। घर को मंगल घट तथा मंगल कलश कहा गया है[10]।

आकार में गोल होने के कारण कलश को पृथ्वी का प्रतीक भी माना गया है। कलश के मुख पर आम के कोमल पत्तियों को रखकर उस पर नारियल रखा जाता है कलश के बाहर कुमकुम, हल्दी से स्वस्तिक एवं पुष्प व ज्यामीतिय आलेखन से सुसज्जित किया जाता है। इसी कारण से धार्मिक आयोजनों, विवाहोत्सव, गृह प्रवेश, विभिन्न त्योहारों में विभित्ता मंत्रोच्चार के साथ कलश की पूजा व अनुष्ठान किया जाता है।

भारत के ग्रामीण क्षेत्र में विवाह उत्सवों में घर के मुख्य दरवाजों के दोनों और स्थानीय लोक शैली में कलश का चित्रांकन किया जाता है। लाल रंग से सरल व मोटी रेखाओं द्वारा चित्रित ये कलश श्री, समृद्धि एवं उल्लास के प्रतीक के रूप में सकारात्मक ऊर्जा को प्रवाह करती है। ऐश्वर्य की देवी लक्ष्मी के प्रतीक स्वरूप कलश के ऊपर हरे रंग से आम के पत्ते एवं भूरे रंग नारियल को रखकर पूर्ण कलश चित्रित किया जाता है कलश के मध्य भाग को बहुत ही सरल एवं सुंदर आलेखन से सुसज्जित किया जाता है। इस प्रकार लोक समाज में मांगलिक कार्यों एवं प्रत्येक शुभ अनुष्ठानों में मंगल कलश धार्मिक संवेदनाओं का प्रतीक है।

भारतीय लोक कला में लोकप्रिय प्रतीकों के माध्यम से लोक जीवन की संस्कृति, धर्म, कला और समाज को आत्मसात कर सकते है। प्रतीक न केवल लोक जीवन के भावों को अभिव्यक्त करते है बल्कि मांगलिक भावनाओं को समृद्ध करते है। सहज सरल एवं स्थानीय बोधगम्य चित्रों में रंग, रेखा एवं संयोजन की मूल भावना को सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करते है। हमारे जीवन का हर मांगलिक कार्य इन्ही में रचा बसा है, इनके अंकन से मन आनन्दित हो उठता है और सकारात्मक ऊर्जा का संचार होने लगता है। इन प्रतीकों के सृजन से घर परिवार में सुख शान्ति का अनुभव होता है एवं इन मांगलिक प्रतीकों में देवी–देवताओं की उपस्थिति मानी जाती है। यह कहना अप्रासंगिक न होगा कि भारतीय लोक परम्परा में ये जीवित ये मांगलिक प्रतीक सर्जनकर्ता एवं दर्शक के शारीरिक एवं मानसिक सौन्दर्य को परिष्कृत करते है।

संदर्भ सूची

1. गुप्ता, डॉ नीलिमा : भारतीय लोक कला (छत्तीसगढ़ के संदर्भ में) स्वाति पब्लिकेशनस, 34 सैन्ट्रल मार्केट अशोक बिहार दिल्ली, पृष्ठ–38.
2. श्रीवास्तव, डॉ0 ए0 एल0 : भारतीय कला प्रतीक, उमेश प्रकाशन, लूकरगंज, इलाहाबाद, उत्तरप्रदेश, पृष्ठ–19.
3. गुप्ता, डॉ नीलिमा : भारतीय लोक कला (छत्तीसगढ़ के संदर्भ में) स्वाति पब्लिकेशनस, 34 सैन्ट्रल मार्केट अशोक बिहार दिल्ली, पृष्ठ–41.
4. अग्रवाल, वासुदेवशरण : भारतीय कला, पृथ्वी प्रकाशन, अमेठी कोठी, नगवा, वाराणसी, पृष्ठ–336.
5. श्रीवास्तव, डॉ0 ए0 एल0 : भारतीय कला प्रतीक, उमेश प्रकाशन, लूकरगंज, इलाहाबाद, उत्तरप्रदेश, पृष्ठ–17.
6. अग्रवाल, वासुदेवशरण : भारतीय कला, पृथ्वी प्रकाशन, अमेठी कोठी, नगवा, वाराणसी, पृष्ठ–239.
7. सिंह, दिलीप कुमार : प्राचीन भारतीय कला में प्रकृति पूजा (सिन्धुकाल से 1200 ई0 तक) स्वाति पव्लिकेशन, अशोक विहार, दिल्ली, पृष्ठ–10.
8. विश्वकर्मा, डॉ0 श्रीमती प्रीति : पूर्वांच्चल की लोक चित्रकला, कला प्रकाशन, न्यू साकेत कालोनी, वाराणसी, पृष्ठ 68.
9. शाह, विश्वम्बर नाथ : ऐपण, बाकेलाल कंसल, ज्ञानोदय प्रकाशन, मल्लीताल, नैनीताल, पृष्ठ–119.
10. चतुर्वेदी, डॉ मंजुला : भारतीय लोककला के अभिप्राय कला प्रकाशन न्यू साकेत कालोनी बी0एच0यू0 वाराणसी, पृष्ठ–114.